दोहा- पुनः प्रश्न करने लगे, अति आतुर हो पार्थ।
श्रीपति समझाने लगे, फिर सबका भावार्थ॥

शास्त्र विरत, श्रद्धा निरत, सुर पूजन यदि नाथ।
सत, रज, तामस कौन है? कहो द्वारिका नाथ॥

शास्त्र रहित, श्रद्धा सहित, त्रिविध भक्ति है पार्थ।
सत, रज, तामस तीन के सुन मुझसे भावार्थ॥

सभी नर श्रद्धा सुमन, अंतकरण अनुरूप हैं।
अस्तु श्रद्धावत् सभी, श्रद्धा सहित सम रूप हैं॥ 01

देव पूजें, सत्व नर, और यक्ष, राक्षस राजसी।
प्रेत भूतादिक गणों को पूजते हैं तामसी॥ 02

विधि रहित मन, कल्पना वश घोर तप संयुक्त है।
कामना आसक्ति बल, अभिमान से भी युक्त है॥ 03

क्षरण करते देह स्थित, भूतगण परमात्मा।
ऐसे अज्ञानी, अचेतन, आसुरी जीवात्मा॥ 04

त्रिविध आहारी मनुज, जिस भाव से भोजन करें।
यज्ञ, तप और दान भी, उस भांति संयोजन करें॥ 05

स्निग्ध रस युत, सत्व को प्रिय जो बढ़ाते आयु को।
बुद्धि, बल, आरोग्य सुख और प्रीति देता स्नायु को॥ 06

तिक्त, अम्ली, लवण युत और दाह कारक देह को।
रूक्ष कर आहार, राजस, नष्ट करते देह को॥ 07

अधपका गत रस अपावन और दे दुर्गन्ध जो।
पर्युशित, उच्छिष्ट भोजन प्रिय है तामस अंध को।। 08

दोहा- भोजन, भजन, ध्यान और पूजा से होकर मर्मज्ञ।
शास्त्र विहित, फल से विरत, करते ज्ञानी यज्ञ।।

किन्तु फल की कामना, दम्भाचरण से मान से।
विधि सहित हो यज्ञ, फिर भी राजसी है जान ले।। 09

मंत्र बिन और अन्न बिन, विधि से रहित बिन दक्षिणा।
बिना श्रद्धा, विनय तामस यज्ञ की परिकल्पना।। 10

हो अहिंसक, सरल पावन, ब्रह्मचारी जप करे।
देव, ब्राह्मण पूज कर गुरू देह को संयत करे।। 11

सत्य प्रिय, अनुद्वेग कर भाषण का यदि अभ्यस्त है।
स्वाध्यायी वृत्ति से, हो जाती वाणी सिद्ध है।। 12

आत्म निग्रह से अगर मन सौम्य, शीतल, शान्त है।
मन तपस्वी जीव है, जिसका न मन उद्भ्रान्त है।। 13

ये त्रिविध तप जो करे, मन भावना से लीन हो।
है वही सात्विक तपस्वी, कामना से हीन हो।। 14

दंभ, मान सत्कार, पूजा, साधना ही अर्थ है।
क्षणिक फल दायी तपस्या, राजसी है व्यर्थ है।। 15

किन्तु हठ वश करके तप दे अन्य को संताप जो।
तामसी, तपसी, तपातप, तप्त, पावे ताप को।। 16

दोहा- देश, काल, सत्यात्र, लख, निशिदिन देता दान।
सात्विक दानी दान दे रहता निर अभिमान॥

करे प्रत्युपकार, देकर दान, मन में क्लेश हो।
पद, प्रतिष्ठा, मान, रक्षक, दान राजस वेश हो।। 17

निष्प्रयोजन, काल, मर्यादा रहित, यदि दान हो।
उचित, अनुचित पात्र बिन देखे अगर सम्मान हो।। 18

किसको क्या देना है? कब देना, नहीं यदि ज्ञान है।
पात्र बिन, सत्कार बिन यदि दत्त, तामस दान है।। 19

ॐ तत् सत् नाम त्रय में, ब्रह्म ही वेदोक्त है।
यज्ञ तप और दान में, इनका जो करता बोध है।। 20

ॐ के ओंकार में परमात्मा साकार है।
और तत् सत् भाव ही, इस जगत का आधार है।। 21

अस्तु, जप, तप, यज्ञ में किंचित न मन लिप्सा करे।
मेरा मुझको दे के, जग कल्याण की इच्छा करे।। 22

ॐ तत् सत् भाव विन किंचित न कुछ कल्याण कर।
लोक या परलोक दोनों में नहीं निर्वाण कर।। 23

दोहा- यह सब स्थिर भाव रख, कर तू जप, तप, दान।
लोक, काल, गति तीन में निश्चय हो कल्याण॥

कार्तिक मास सुहावना, कृष्ण द्वितीया होय।
द्वादश मंत्र सहित पढ़े, मन सब संशय खोय।।

इति श्रीकृष्ण अर्जुन संवाद
श्रद्धात्रय विभाग योग सप्तदश अध्याय समाप्त।